संताल परगना महाविद्यालय, दुमका

अध्ययन सामग्री, हिंदी (प्रतिष्ठा)

चतुर्थ छमाही, core – 9 (हिंदी नाटक)

विषय : मोहन राकेश का नाटक 'लहरों का राजहंस'

प्रस्तुतकर्ता अध्यापक – डॉ॰ यदुवंश यादव

हिंदी विभाग

स्वतंत्रता के उपरांत हिंदी नाटकों में व्यापक परिवर्तन देखा जा सकता है। पारंपरिक रचना प्रक्रिया से हटकर तत्कालीन नाटककारों नें अपने समय को सूक्ष्म रूप से रचने का प्रयास किया। समय व समाज के संत्रास और मध्यवर्गीय संघर्ष को इन नाटककारों के यहाँ बेहतर ढंग से देखा जा सकता है। मोहन राकेश ऐसे रचनाकारों में प्रमुख हैं जो परिवार और व्यक्ति के संघर्ष को राजनीतिक व सामाजिक कारणों से जोड़कर देखने का प्रयास करते हैं। मोहन राकेश की नाटयकला को पारम्परिक कसौटी पर कसने पर हमें निराशा ही हाथ लगेगी क्योंकि उनके नाटक पारंपरिक नाट्यशास्त्र में उल्लेखित तत्वों के आधार पर लिखे ही नहीं गए हैं। एक बात जो मोहन राकेश के नाटकों में देखी जाती है कि उनके तीनों नाटकों में अभिव्यक्त कथा में घर से भागने की बेचैनी और बार-बार वापस लौट आने की मज़बूरी है। यह ऐतिहासिक नाटकों 'अषाढ़ का एक दिन' और 'लहरों का राजहंस' तथा आधुनिक मध्यवर्ग की कहानी कहने वाले नाटक 'आधे-अधूरे' में समान रूप से दिखाई देती है। संत्रास, द्वन्द्व और अस्तित्व की पहचान के लिए बेचैनी तीनों नाटकों में अभिव्यक्त हुई है। इसलिए अलग-अलग कथाएँ होते हुए भी तीनों नाटक एक ही भावभूमि पर टिके दिखाई देते हैं। वस्तुतः वर्तमान जीवन की विसंगतियों और तद्जनित अन्द्र्वन्दों से लड़ता और टूटता हुआ आम आदमी ही इन नाटकों का मूल कथ्य है। स्वयं राकेशजी को जीवन के प्रत्येक पक्ष में नयी समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ा है, 'युगीन परिस्थितियों का दबाव उनके नाटकों के द्वन्द्व, संघर्ष और उद्वेलन में बखूबी अभिव्यक्ति हुआ है। मनुष्य का परिवेश, सांस्कृतिक और भौगोलिक परिस्थतियां ही मानवीय मूल्यों को गढ़ती हैं आधुकिता का आधार यद्यपि समय सापेक्षता है फिर भी सम्बन्धहीनता और नए सम्बन्धों के निर्माण के पीछे कई ऐतिहासिक कारण होते हैंद्व इस ओर भी मोहन राकेश ने अपने नाटकों में संकेत किया है। 'लहारो के राजहंस' सांसारिक सुखों और आध्यात्मिक शान्ति के अन्तर्विरोधों के बीच खड़े व्यक्ति के द्वन्द्व को अभिव्यक्त करने वाला नाटक है।

मोहन राकेश के 'लहरों के राजहंस' नाटक का बाह्य परिवेश ऐतिहासिक है। यह एक द्वन्द्व-प्रधान नाटक है। क्या वस्तु-योजना, क्या पात्र योजना, द्वन्द्व सभी जगह प्रबल और प्रखर है। वास्तव में नाटककार राकेश ने नाटक के प्रमुख पात्रों के माध्यम से आधुनिक एवं युगों-युगों से द्वन्द्वग्रस्त चेतना के परिहार का प्रयत्न किया है। इसमें उन्हें कहाँ तक सफलता मिली है और कहाँ तक असफलता, यह एक अलग प्रश्न है; किन्तु नाटक की सर्जना का मूल उद्देश्य मनुष्य की द्वन्द्वग्रस्त चेतना को प्रतिबिम्बत करना ही है। इसीलिए इस नाटक के सभी पात्रों का चरित्र अन्तर्द्वन्द्व प्रधान है।

सुन्दरी इस नाटक की नायिका है। वह नन्द की पत्नी है। वह सिर्फ नाम की ही सुन्दरी नहीं, बल्कि अत्यधिक रूप-लावण्य से युक्त नारी है। उसका रूप-लावण्य दूसरी स्त्रियों के लिए ईर्ष्या का विषय हैं। वह अपनी सुन्दरता के कारण ही राजकुमार नन्द को अपने संकेतों पर चलने के लिए विवश कर देती है।

नन्द भी उसके रूपपाश में बंधा रहना ही अपना सौभाग्य मानता है। सुन्दरी को अपने लावण्य पर अभिमान है। नन्द के प्रति उसका कथन उसी ओर संकेत करता है- ''क्या कहते हैं आपका ब्याह एक यक्षिणी से हुआ है जो हर समय आपको अपने जादू से चलाती है।'' इस कथन में आत्मप्रशंसा की एक झलक हमें मिलती है। लेकिन इसमें अतिश्योक्ति भी नहीं है। वह एक मानवी से ज्यादा सुन्दर है। नन्द का कथन इसी बात को प्रमाणित करता है- यक्षिणी हो या नहीं, मैं नहीं कह सकता, परंतु मानवी तुम नहीं हो। ऐसा रूप मानवी का नहीं होता।

इसमें नाटककार ने ऐतिहासिक पात्रों तथा कथा स्थितियों को उनकी ऐतिहासिकता से बाहर निकाल कर युगीन परिस्थितियों के साथ जोड़ दिया है। जीवन के प्रेम और श्रेय के बीच स्थित कृत्रिम और आरोपित द्वन्द्व ही नाटक का मुख्य चेतना बिंदु है। दो वस्तुओं के चयन के समय होने वाले द्वन्द्व और कशमकंश की अभिव्यक्ति नाटक में हुई है। प्रस्तुत नाटक में भी ऐतिहासिक कथानक के आधार पर आधुनिक मनुष्य की बेचैनी और अन्तद्र्वन्द्व को उभारा है। हर व्यक्ति अपनी मुक्ति का मार्ग स्वयं खोजना है क्योंकि दूसरो के द्वारा खोजी गई राह चाहे जितनी श्रद्धास्पद, आकर्षक और मुग्ध्कारी हो किसी भी संवेदनशील प्राणी के लिए ग्राह्य नहीं हो सकती। नाटक के अंत में नंद द्वारा बुद्ध के अपेक्षित भिक्षुक रूप को और सुंदरी के आत्मसंतुष्ट संकुचित सं ुदर जीवन को त्याग कर चले जाना इसी तथ्य को रेखांकित करता है कि नंद को भी अपनी मुक्ति के मार्ग की रचना स्वयं ही करनी होगी। यद्यपि कथा की गहनता और गहराई के अनुरूप इसमें पर्याप्त सघनता, एकाग्रता और संगति की कमी दिखाई देती है। मगर इस कमी के होने पर भी पहले दो अंक सुगठित और कलापूर्ण बन पड़े हैं। इसमें आंतरिक उद्वेग तथा

तनाव को बड़ी सूक्ष्मता, संवेदनशीलता और कुशलता के साथ रचा गया है। मोहन राकेश की नाट्यकला के संबंध में यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि अपनी तमाम सीमाओं के बावजूद अनेक नाटक हिंदी नाटक के सर्वश्रेष्ठ और विकसित रूप को प्रस्तुत करते हैं। ये नाटक रंगमंच की दृष्टि से भी अत्यन्त सफल हैं। यही कारण है कि उन्होंने व्यापक स्तर पर हिंदी नाट्य लेखन को प्रभावित किया और कई ऐतिहासिक कारणों से हिंदी नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में मील का पत्थर बन गए।

'लहरों के राजहंस' में एक ऐसे कथानक का नाटकीय पुनराख्यान है जिसमें सांसारिक सुखों और आध्यात्मिक शान्ति के पारस्परिक विरोध तथा उनके बीच खड़े हुए व्यक्ति के द्वारा निर्णय लेने का अनिवार्य द्वन्द्व निहित है। इस द्वन्द्व का एक दूसरा पक्ष स्त्री और पुरुष के पारस्परिक संबंधो का अंतर्विरोध है। जीवन के प्रेम और श्रेय के बीच एक कृत्रिम और आरोपित द्वन्द्व है, जिसके कारण व्यक्ति के लिए चुनाव कठिन हो जाता है और उसे चुनाव करने की स्वतंत्रता भी नहीं रह जाती। चुनाव की यातना ही इस नाटक का कथा-बीज और उसका केन्द्र-बिन्दु है। धर्म-भावनाओं से प्रेरित इस कथानक में उलझे हुए ऐसे ही अनेक प्रश्नों का इस कृति में नए भाव-बोध के परिवेश में परीक्षण किया गया है। सुन्दरी के रूपपाश में बँधे हुए अनिश्चित, अस्थिर और संशयी मतवाले नन्द की यही स्थिति होनी थी कि नाटक का अंत होते-होते उसके हाथों में भिक्षापात्र होता और धर्म-दीक्षा में उसके केश काट दिए जाते। लहरों के राजहंस के कथानक को आधुनिक जीवन के भावबोध का जो संवेदन दिया गया है, वह इस ऐतिहासिक कथानक को रचनात्मक स्टार पर महत्त्पूर्ण बनाता है। वास्तव में, ऐतिहासिक कथानकों के आधार पर श्रेष्ठ और सशक्त नाटकों की रचना तभी हो सकती है, जब नाटककार ऐतिहासिक पत्रों और कथा-स्थितियों को 'अनैतिहासिक' और 'युगीन' बना दे तथा कथा के अंतर्द्वंद्व को आधुनीक अर्थ-व्यंजन प्रदान कर दे। सभी देशों के नाटक-साहित्य के इतिहास में विभिन्न युगों में जब भी श्रेष्ठ ऐतिहासिक नाटकों की रचना हुई है, तब नाटककारों ने प्राचीन कथानकों को नई दृष्टि से देखा है और उनको नई अर्थ-व्यंजनाएँ दी हैं। उसी परंपरा में मोहन राकेश का यह नाटक भी है जो अध्ययन-कक्षों तथा रंगशालाओं में पाठकों और दर्शकों, दोनों को रस देता है।

नाटक के प्रमुख पात्र एवं उनका परिचयः

नंदः नाटक का केन्द्रीय पात्र नंद गौतम बुद्ध का सौतेला भाई था। यह नाटक उनके मानसिक द्वन्द्व के इर्द-गिर्द रचा गया है। एक ओर वे गौतम बुद्ध से प्रभावित होकर भिक्षु बनना चाहते हैं दूसरी ओर अपनी पत्नी सुन्दरी पर भी अनुरक्त है। जब नंद सुन्दरी के पास होते हैं तब वे आध्यात्मिक होना चाहते हैं लेकिन जब तथागत के निकट होते हैं तो सांसारिकता से मुक्त नहीं हो पाते। नंद मन का प्रतीक है।

श्यामांगः नंद का कर्मचारी। यह वैचारिक रूप से अन्तर्द्वन्द्व में जीता हैं। इसका मन भी नंद और लहरों के राजहंस की तरह स्थिर नहीं है।

सुन्दरीः नंद की रूप गर्विता रानी जो सांसारिकता में पूरी तरह रमी हुई हैं। वह गौतम बुद्ध के सन्यास के लिए प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से यशोधरा की उदासीनता को दोषी मानती है। सुंदरी संसार का प्रतीक है।

श्वेतांगः नंद का प्रधान कर्मचारी तथा राजमहलों में नंद और सुन्दरी का विश्वासपात्र।

अलकाः सुन्दरी की परिचारिका व सहेली जो उसका पूरा ध्यान रखती हैं।

नीहारिकाः दासी।

भिक्षु आनंदः गौतम बुद्ध का शिष्य।

मैत्रेयः नंद का मित्र।

शंशाकः गृहाधिकारी।